पहले खाद की किल्लत और अब मानसून की बेरुख़ी

रीना सैनी कलाट, नदी के रेखाचित्र, 2020

कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय द्वारा जारी आँकड़ों के **अनुसार** 25 जून 2026 तक मात्र 183 लाख हेक्टेयर खेतों की बुवाई हो पाई है। पिछले ख़रीफ़ के मौसम में अब तक 236 लाख हेक्टेयर की बुवाई पूरी हो गई थी। बुवाई के रकबे में इस चिंताजनक देरी का मुख्य कारण मानसून का बेहद विलंब से आना तथा औसत से कम स्तर की बारिश है। ज़्यादातर ख़रीफ़ फ़सलों का रकबा पिछले साल की तुलना में कम है। जहाँ धान की बुवाई का रकबा 9 प्रतिशत कम है, वहीं दालों का रकबा करीब 7 प्रतिशत कम रहा। तिलहन में यह गिरावट 19 प्रतिशत है जबकि कपास में 16 प्रतिशत।

दक्षिणपश्चिमी मानसून का आगमन सामान्यत : 1 जुलाई को हो जाता है। इस साल यह 4 जुलाई को केरल **पहुँचा**। यह भारत का सबसे महत्त्वपूर्ण वर्षा का मौसम पैदा करता है। यह भारत की कुल सालाना वर्षाजल का क़रीब 75 प्रतिशत लेकर आता है। दक्षिणपश्चिमी मानसून इस साल देरी से भी पहुँचा है और इसकी बारिश का स्तर भी सामान्य स्तर से कम है। कुल वर्षा का **स्तर** 1 से 17 जून के बीच अपने दीर्घकालिक औसत स्तर से 38 प्रतिशत कम रहा। सबसे ज़्यादा प्रभावित मध्य भारत और पूर्वी एवं उत्तरपूर्वी भारत के क्षेत्र हैं। जुलाई माह में भी औसत से कम बारिश का **अनुमान** है।

विलंबित मानसून फ़सलों की उपज को कम करता है। फ़सलों की उपज में गिरावट चिंताजनक है। भारत विश्व का सबसे बड़ा चावल निर्यातक है। कुल सालाना वैश्विक विश्व निर्यात का तक़रीबन 40 प्रतिशत **हिस्सा** भारत करता है। इससे भारत की निर्यात से अर्जित राशि में कमी आ सकती है। भारत अपनी घरेलू **खाद्य तेल** की ज़रूरत का आधे से ज्यादा हिस्सा आयात से पूरा करता है। तिलहन उत्पादन में कमी से खाद्य तेल की आयात पर निर्भरता बढ़ सकती है। बढ़े आयात और घटे निर्यात की वजह से भारत का कृषीय व्यापार संतुलन बिगड़ेगा।

2023-24 के हालिया मौजूद भूमि उपयोग आँकड़ों के अनुसार भारत में क़रीब साठ प्रतिशत खेती की ज़मीन पर ही सिंचाई सुविधा मौजूद थी। क़रीब 40 प्रतिशत खेती की ज़मीन सिंचाई के लिए मानसून-निर्भर है। पंजाब और हरियाणा जैसे राज्यों में 90 प्रतिशत खेतों तक सिंचाई के साधन मौजूद हैं। लेकिन अन्य राज्यों में खेती की ज़मीन के एक बड़े हिस्से पर मानसून के भरोसे ख़रीफ़ की खेती होती है। पूर्वोत्तर के अधिकतर राज्यों, झारखंड, ओडिशा, छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र, कर्नाटक जैसे राज्यों में आधे से भी ज्यादा खेतों का रकबा मानसून निर्भर है। इन राज्यों की ख़रीफ़ की पैदावार पर कमज़ोर मानसून का विषम प्रभाव पड़ने वाला है।

भारत के क़रीब 70 प्रतिशत किसान 1 हेक्टेयर से कम जोतों पर **खेती करते** हैं। ये मुख्यत: अपने परिवार के भोजन की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए फ़सलें उगाते हैं। कम पैदावार उनकी खाद्य सुरक्षा पर नकारात्मक प्रभाव डालेगी। इनको अपनी खाने की आवश्यकता पूरी करने के लिए बाज़ार से अनाज ख़रीदने को विवश होना पड़ेगा। फ़सलों की कम पैदावार सामान्यत: उनकी स्थानीय क़ीमतों में भी उछाल लाती है। छोटे किसान पर इसकी दोहरी मार पड़ेगी। पैदावार में गिरावट की वजह से किसानों की आय पर भी प्रभाव पड़ेगा, जो ग्रामीण माँग को शिथिल करेगा। यह पहले से ही निम्न स्तर की माँग से संघर्ष कर रहे देश के लिए किंचित भी अच्छी ख़बर नहीं है।

मौसम विभाग का अनुमान है कि वर्तमान में एल-नीनो की क्षीण परिस्थितियाँ मौजूद हैं और मानसून के आगामी हिस्से में उनके प्रबल होने की आशंका है। यह भारत के किसानों की मुश्किलों को और गंभीर बना सकता है। विलंबित मानसून और औसत से कम वर्षा की ख़बर तब आ रही है जब किसान पहले से ही ईरान और अमेरिका तथा इज़रायल के बीच जारी युद्ध के परिणामों को झेल रहे थे। तेल के दामों में वृद्धि की वजह से किसानों की लागत बढ़ रही थी। रही-सही कसर रासायनिक खाद के संकट ने पूरी कर दी।

यमुना बाढ़-11, अतुल भल्ला

भारत रासायनिक खादों तथा उनके उत्पादन के लिए आवश्यक अवयवों के लिए मुख्यत : आयात पर निर्भर है। यूरिया के उत्पादन में लगने वाले प्राकृतिक गैस का 78 प्रतिशत हिस्सा **आयात** किया जाता है। इसी तरह रॉक फ़ॉस्फ़ेट, सल्फ़र, अमोनिया, फ़ॉस्फ़ोरिक एसिड, तथा पोटाश के म्युरिएट का आधा से ज़्यादा हिस्सा भी आयात ही किया जाता है। प्राकृतिक गैस का तक़रीबन **दो-तिहाई भाग** खाड़ी के देशों से होर्मुज़ की खाड़ी से होकर आता है। रासायनिक खादों का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा भी उसी रास्ते आता है। रूस-युक्रेन युद्ध, और उसके बाद ईरान और अमेरिका तथा इज़रायल ने भारत के रासायनिक खाद सेक्टर को डांवाडोल कर रखा है।

होर्मुज़ की खाड़ी की घेराबंदी से भारत के किसान पहले ही खाद की किल्लत और उनकी बढ़ती क़ीमतों को लेकर आशंकित

थे। कालाबाज़ारी और ज़माखोरी जैसी समस्याओं से किसान और त्रस्त हो गए हैं। ग़ौरतलब है कि रासायनिक खाद की समस्या पूरी तरह सरकारी नीतियों की देन है। सरकार-दर-सरकार ने, फ्री-मार्केट के नवउदारवादी सिद्धांत का हवाला देते हुए, रासायनिक खाद के उत्पादन में आत्मनिर्भरता हासिल करने के बजाय अंतरराष्ट्रीय बाज़ार से आयात पर निर्भरता को बढ़ावा दिया। आज हालत है कि भारत अपनी खेती के लिए आवश्यक खाद के लिए पूरी तरह अंतरराष्ट्रीय बाज़ार पर निर्भर है, क्योंकि घरेलू उत्पादन क्षमता नाकाफ़ी है। अंतरराष्ट्रीय बाज़ार में होने वाली एक छोटी सी हलचल भी भारत के किसानों के लिए रोजी-रोटी का संकट पैदा कर देती है और भारत की खाद्य सुरक्षा को ख़तरे में डाल देती है।

ज़ाहिर है, विलंबित और अपर्याप्त मानसून और पहले से मौजूद बढ़ती लागत और खाद के संकट ने मिलकर कृषि क्षेत्र के सामने भारी मुश्किलें पैदा कर दी हैं। अगर इनसे निपटने के लिए त्वरित क़दम नहीं उठाए गए तो करोड़ों किसानों के लिए कई तरह की चुनौतियाँ खड़ी हो सकती हैं। आशंका यह है कि ग्रामीण मज़दूरी में गिरावट आ सकती है। कुल ग्रामीण माँग में गिरावट से अर्थव्यवस्था के बढ़ने की रफ़्तार पर भी ब्रेक लग सकता है। सरकार को एमएसपी के दामों को समुचित स्तर पर तय करके ज्यादा से ज्यादा किसानों को इसके दायरे में लाना चाहिए, ख़ासकर उन राज्यों पर विशेष ध्यान देना चाहिए जहाँ एमएसपी की ख़रीद बेहद कम अथवा नगण्य है।

मनरेगा को ग्रामीण अर्थव्यवस्था में कमज़ोर पड़ती माँग को सहारा देने का एक कारगर उपाय माना जाता है। मनरेगा के तहत मिलने वाले काम के दिनों और मज़दूरी को बढ़ाकर खेती और मज़दूरी से घटी आय को कुछ हद तक काबू किया जा सकता है। रासायनिक खाद की समस्या के लिए आत्मनिर्भरता ही एक उपाय है। निजी क्षेत्र और बाज़ार की निरंकुशता के भरोसे छोड़े जाने का नतीजा आज देखने को मिल रहा है। सरकार को रासायनिक खाद के उत्पादन में यथासंभव आत्मनिर्भरता हासिल करने के लिए ख़ुद निवेश करके घरेलू उत्पादन क्षमता बढ़ाने की पहल करनी चाहिए। सरकार जब तक प्रभावी नीतियों की बजाय प्रभावहीन जुगाड़ों का सहारा लेती रहेगी,ये समस्याएँ गहराती जाएँगी।